हिंदी उपन्यास में लोक-संस्कृति

संपादक

पूनम सिन्हा

त्रिविक्रम नारायण सिंह

हिन्दी उपन्यास में लोक संस्कृति

सम्पादक

पूनम सिन्हा

त्रिविक्रम नारायण सिंह

समीक्षा प्रकाशन

दिल्ली / मुजफ्फरपुर

ISBN : 978-93-87638-85-3

प्रथम संस्करण
2020

सर्वाधिकार ©
सम्पादक

प्रकाशक
समीक्षा प्रकाशन
जे.के.मार्केट, छोटी कल्याणी
मुजफ्फरपुर (बिहार)–842 001
फोन : 09334279957, 09905292801
E-mail : samikshaprakashan@yahoo.com
www : samikshaprakashan.blogspot.com
samikshaprakashan.in

दिल्ली कार्यालय
आर-27, रीता ब्लॉक
विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली–92
मो.-07970692801

पृष्ठ-सज्जा
सतीश कुमार

मुद्रक
बी०के० ऑफसेट,
शाहदरा, दिल्ली।

मूल्य
400.00 (चार सौ रुपये)

Hindi Upanas Me Lok Sanskriti
Edited by **Poonam Sinha** **Rs. 400.00**

अनुक्रम

सम्पादकीय.... 05

- भारतीय संस्कृति लोक संस्कृति में जीवंत है : **डॉ. मृदुला सिन्हा** 11
- डॉ. रांगेय राघव के उपन्यासों में लोक संस्कृति : **डॉ. उषा किरण खान** 19
- लोक जीवन और उपन्यास : **प्रो. सत्यकाम** 24
- उपन्यास और लोक-संस्कृति : **रेवती रमण** 43
- घरवास : लोक जीवन से साक्षात्कार : **पूनम सिन्हा** 49
- सुर बंजारन : लोक से विलुप्त होते सुरों की धड़कन : **पूनम सिन्हा** 57
- हिंदी उपन्यासों में लोकसंस्कृति : रामधारी सिंह दिवाकर के उपन्यासों में लोकसंस्कृति : **हरिनारायण ठाकुर** 69
- हिन्दी उपन्यासों में लोक-संस्कृति के विविध आयाम 'देहाती-दुनिया' के संदर्भ में : **प्रो. सुधा बाला** 78
- लोकसंस्कृति का ऐतिहासक दस्तावेज अगन हिंडोला : **प्रो. मंगला रानी** 88
- लोकजीवन को सहेजने वाली कथाकार : उषा किरण खान : **सुनीता गुप्ता** 94
- आंचलिक उपन्यास में लोक-संस्कृति : **डॉ. शैल कुमारी वर्मा** 101
- मैला आँचल में लोक संस्कृति की झलक : **डॉ. त्रिविक्रम ना. सिंह** 107
- फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में लोक संस्कृति के विभिन्न चित्र : **डॉ. धीरेन्द्र प्रसाद राय** 116
- अमृतलाल नागर के उपन्यासों में लोक संस्कृति : **डॉ. कल्याण कुमार झा** 124
- लोक जीवन की यथार्थवादी एवं आदर्शवादी चेतना का सच्चा दस्तावेज 'मैला आंचल' : **स्वर्णिम शिप्रा** 133
- आँचलिक उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **पल्लवी कुमारी** 142
- 'गोदान' में लोक-संस्कृति : **स्मृता** 148
- प्रेमचन्द के उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **उमेश मल्लिक** 153

- 'गोदान' में निहित लोक-संस्कृति के चित्र : **रवि कुमार** 157
- **नागार्जुन** के उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **डॉ. इन्दिरा कुमारी** 161
- **काशीनाथ** सिंह के उपन्यासों में लोक संस्कृति : **डॉ. दुर्गानन्द यादव** 168
- रामधारी **सिंह** दिवाकर के उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **वेदांत चंदन** 176
- **अनामिका** के उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **सिन्धु कुमारी** 182
- **हिंदी** उपन्यास में लोक-संस्कृति : **शिव प्रिया** 188
- **भगवानदास** मोरवाल के उपन्यास 'हलाला' में लोकसंस्कृति : **रेशमी कुमारी** 191
- रेणु के उपन्यासों में लोक संस्कृति : **स्मिता कुमारी** 194
- संस्कृति की सामासिकता : **डॉ. वीणा शर्मा** 198
- आंचलिक उपन्यासों में लोक-संस्कृति : **विनीता कुमारी** 205

संगोष्ठी प्रतिवेदन **210**

■

फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में लोक-संस्कृति के विभिन्न चित्र

डॉ. धीरेन्द्र प्रसाद राय

आधुनिक हिन्दी में आंचलिक उपन्यास के प्रणेता, क्रांतिकारी विचारधारा के संवाहक स्व. फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों के आद्योपान्त अध्ययनोपरांत ऐसा प्रतीत होता है कि वे लोक-संस्कृति के महान आग्रही थे। उनकी दृष्टि में भारतीय लोक-संस्कृति से अच्छी अन्य कोई संस्कृति है ही नहीं। रेणु को गाँव की प्रकृति और वहाँ की संस्कृति से विशेष अनुराग था। तभी तो शहर में रहते हुए भी अवकाश के दिनों में वे अपने गाँव औराही हिंगना चले आते थे और वहाँ के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेते थे तथा लोगों में सांस्कृतिक चेतना भरने का प्रयत्न करते थे। उनके विभिन्न उपन्यासों में संस्कृति के बड़े ही यथार्थ चित्र उभरे हैं। पूर्व की संस्कृति की अपेक्षा वर्तमान समय की संस्कृति किस प्रकार दूषित हो गयी है, इसका सजीव चित्र इनके उपन्यासों में देखा जा सकता है। 'मैला आंचल' में मेरीगंज की लोक-संस्कृति का चित्रण इस व्यापकता के साथ हुआ है कि इसे वहाँ की संस्कृति का पृष्ठ कहा जा सकता है। 'उपन्यासकार ने अपने उपन्यासों में लोक-विश्वास, रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, खान-पान, रहन-सहन, तीर्थ-मेले आदि के समावेश के साथ-साथ लोक-गीत, लोक-कथा, लोक-नृत्य एवं लोक-कथाओं का चित्रण भी विशेष रूप से किया है। मेरीगंज अंचल के लोग अंधविश्वासी हैं। वे लोग बड़े ही भोले-भाले हैं और जो विश्वास परम्परा से चले आ रहे हैं, उन्हें बड़ी दृढ़ता के साथ पकड़े रहते हैं। रेणु ने इस अंधविश्वास का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है, यथा--

(क) 'जंगल की ओर दो पुड़ियाँ फेंक देते हैं, जंगल के देवी-देवता

और भूत-पिशाच के लिए।'–मैला आँचल

(ख) 'सिन्दूर लगाते समय जिस लड़की की नाक पर सिन्दूर झड़कर गिरता है, वह अपने पति की बड़ी दुलारी होती है।' मैला आँचल।

(ग) 'दुहाईवाला पीर। भूल चूक माँफ करो। मेरे बच्चा को प्रान फेर दो महातमा। सिरनी और बद्धी चढ़ाऊँगी।' मैला आँचल।

(घ) 'विशाल परती पर डेढ़ सौ एकड़ की पाँच परिधियों पर इस ब्रह्मपिशाच का राज्य था। प्रत्येक वर्ष शरद की चाँदनी में वह इन पाँचों चक्रों में अपना रुपया पसारकर सूखने देता था।' परती परिकथा।

(ङ) 'पुल आदि बाँधने से पहले आदमी की बलि देते हैं।' –परती परिकथा।

(च) 'आँचल में सिर्फ अच्छत गिरे तो समझो कपाल खराब है, यदि फूल गिरे तो मनोकामना पूरी समझो।' –परती परिकथा।

(छ) 'रोज सुबह छींकने से मुवक्किलत कैसे आयगा?... जिस लड़की को कपार चौड़ा वह जवानी में बेवा हो जाती है।'

जन-साधारण की यह भी संस्कृति है कि वह जादू-टोना, तंत्र-मंत्र आदि में बहुत अधिक विश्वास रखता है। रेणु आरंभ में साम्यवादी विचारधारा के थे, बाद में लोकनायक जयप्रकाश नारायण से प्रभावित होकर वे समाजवादी विचारधारा के अनुयायी बन गये, किन्तु अन्त में वे पुनः साम्यवादी विचारधारा के बन गये। इसलिए वे तंत्र-मंत्र, जादू-टोना, डायन-जोगीन, ओझा-गुनी आदि में विश्वास न करते थे। लेकिन अपने अंचल के लोगों को इन पर विश्वास करते देखा था। तभी तो उन्होंने अपने उपन्यासों में इन सबका चित्रण किया है, यथा–

(क) 'डाइन का कारनामा है, समझे हीरू? शुक्रवार को अमावस्या है। जिस पर तुझे सन्देह है उसके पिछवाड़े में बैठ रहना। ठीक दो पहर रात को वह निकलेगी, उसका पीछा करना। वह तुम्हारे बच्चे को जिलाकर तेल-फुलेल लगाकर गोदी में लेकर जब नाचने लगेगी–उस समय अपना बच्चा छीन लो, तो फिर उस बच्चे को कोई मार नहीं सकता। इन्द्र का बज्र भी फूल का हो जायगा।' –मैला आँचल

(ख) 'पंचहरिया मुखेनाम' डिबिया को खोलने से अमावस्या की रात होती है और 'अंगूठी' के नगीने से आँखी पानी आ जाता है।' —परती परिकथा

(ग) 'लूती की माँ ने लगातार एक महीने झाड़फूँक करवाया, तब कहीं जाकर यह सपना आना बन्द हुआ।' **परती परिकथा।**

(घ) 'तालेश्वर गोढ़ी ने बूढ़ी बूढ़िया में एक साथ चार डाइनों को नंगा नचाया था। तालेश्वर गोढ़ी का जादू प्रसिद्ध है। आज भी यदि वह मसान की आरिश्याँ जिनके घर आँगन में गाड़ दे वहाँ ऐसा बनरभुता लग जाय कि एक ही वर्ष में सब जन धन विनष्ट हो जाये। अपने जादू के बल पर वह मृत बालकों को पुनर्जीवित कर देता है और उसने डाइनों का गुण चुनौती में समेट लिया था।' **जुलूस**

(ङ) 'साधु संन्यासी लोगों से तनिक दूर रहना। उन लोगों का क्या ? कोई ऐसा मन्तर पढ़कर फूँक दे कि हमलोगों को पहचानेंगे नहीं।' **कितने चौराहे।**

इसी प्रकार जन साधारण ज्योतिष में भी विश्वास करता है कि हाथ की ऊर्ध्व रेखा तो सीधे तर्जनी में चली गयी है, लेकिन कुंडली के दशम घर में शनि है। अतः शुभ है।

डॉ. आनन्दमोहन उपाध्याय के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'लोकभाषा रेणु के औपन्यासिकता की प्राणवत्ता है। इनके उपन्यासों में लोक परिवेश अपनी समूची उर्जस्विता के साथ निवेदित है। डॉ. प्रशान्त की कर्मसाधना की यात्रा आभिजात्य से आँचलिकता की यात्रा है, शहरीपन से ग्राम्यता की शुचितापूर्ण यात्रा है। डॉ. प्रशान्त की कामना धरती माता के मैला आँचल तले आँसू से भींगी धरती पर प्यार के पौधे लहलहाने की है। ग्राम्य-संस्कृति में जीवन अमूल्य और शिखर तत्त्व है; अतः लोक संस्कृति की हर धड़कन इसे रंजित और उर्जस्वित करने का है।"

रेणु के विभिन्न उपन्यासों में भिन्न-भिन्न जातियों की भी चर्चा हुई। इन जातियों की संस्कृति की भी चर्चा की है। समाज में कुछ ऊँची जाति के लोग रहते हैं और कुछ निम्न जाति के लोग। इन जातियों के रहन-सहन का स्तर भिन्न-भिन्न है। विभिन्न जातियों के गृह-देवता भी

अलग-अलग हैं जिनकी पूजा का विधान भी अलग-अलग है।

उत्सवों और त्योहारों के अवसर पर जन-संस्कृति का स्वरूप देखा जाता है। अगर इन उत्सवों और त्योहारों को जन-संस्कृति के प्राण कहे जायें, तो यह कोई अतिशयोक्ति न होगी। 'मैला आंचल' में रामनगर मेला, लाल बाग मेला, रौतहट मेला, सतुआनी पर्व, अनन्त पर्व, जाट-जट्टिन पर्व, बधवा पर्व का चित्रण हुआ है। 'परती परिकथा' में सोनपुर का मेला, पशुपति मेला, शामा-चकेवा पर्व, पूर्णियाँ के समारोह, परानपुर पार्क-समारोह, वार्षिक पर भोज, सुलतानी परिवारों का मेला, बदरिया घाट का मेला और 'जुलूस' में मुहर्रम, काली मेला, ईद, दुर्गापूजा और 'कितने चौराहे' नामक उपन्यास में होली, बच्चों का मेला, सरस्वती पूजा, मुंडन उत्सव, श्यामा कीर्तन, शाम की आरती, प्रीतिभोज, एकादशी आदि का उल्लेख उपन्यासकार ने अपनी पैनी दृष्टि से किया है जो देखते ही बनता है।'[12] रेणु को अपनी संस्कृति से इतना अधिक प्रेम था कि वे समय निकालकर इन पर्व-त्योहारों और उत्सवों में अवश्य भाग लेते थे।

इतना तो मानना ही होगा कि 'रेणु के उपन्यासों में कुछ बिम्ब (मेला, नाच, रेलयात्रा, अकेला पुरुष) बार-बार आते हैं। यहाँ मेला जीवन के परिवर्तनशील आयाम में आनन्द व खुशियों का अभिप्राय है। रेलयात्रा के कथाभिप्राय में सांसारिक लक्ष्यहीनता में लक्ष्य का आभास देती है। इनके उपन्यासों में सुकुमारी सुशीला नारी का मोटिफ है। जो शरत् के नारी पात्रों के समतुल्य लगती है जो स्वयं समूचे अभिशापों को झेल वरदान ही देती है। 'मैला आंचल' व 'कितने चौराहे' में चील्हड़-अनिष्टसूचक मोटिफ है, जो कहीं उजाड़पन का अभिप्राय है तो कहीं विघटनकारी शक्ति का प्रतीक हल्दी चिरैया 'का कस्य परिवेदना' का उच्चारण कर संघर्षधर्मी चेतना को हल्का संवेगात्मक आघात देती है। चहचहाती पक्षियाँ जीवन की छोटी-छोटी खुशियों की अनुगूँज का अभिप्राय है जैसे इनका प्रयोग परती परिकथा में शामा-चकेवा प्रसंग में हुआ है।'[13]

रेणु एक सच्चे साहित्यकार ही नहीं थे, अपितु गायन-वादन में भी बड़े दक्ष थे। ढोल, झाल, मृदंग, हारमोनियम आदि बजाने की कला में भी निपुण थे। इतना ही नहीं लोक-नृत्यों की गति तथा लोक-गीतों की तान का भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। लोक-गीतों और लोक-नृत्यों द्वारा लेखक ने एक अंचल विशेष की संस्कृति का चित्र अंकित किया है। 'मैला

आँचल' में जालिम सिंह नाच, विदापत नाच, ठेठर नाच, ठेठर कम्पनी का नाच, विदेसिया नाच, बलवाही नाच, संथाली नाच, विहला नाच, परती परिकथा में विदेसिया नाच, सावित्री नाच 'दीर्घतपा' में मछुवारिन नाच आदि नृत्यों का उल्लेख किया है। इन नाचों के लिए विविध प्रबंध किये जाते हैं और उन्मुक्त हृदय से आनन्द विभोर होकर ग्रामवासी इनमें भाग लेते हैं।'[4]

'मैला आंचल' में राष्ट्रभक्ति-संबंधी गीत, साम्प्रदायिक एकता के गीत, होली गीत आदि के समावेश हुए हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित गीत पंक्तियों में देशभक्ति की भावना देखी जा सकती है–**'कहीं पै छापो गाँधी महतमा/चर्खा मस्त चलाते हैं/कहीं पे छापो वीर जमाहिर/जेल के भीतर जाते हैं।/अँचरा पै छापो झण्डा तिरंगा/बाँका लहरदार रे रंगरेजवा।'**[5]

इस प्रकार निम्नलिखित गीत-पंक्तियों में साम्प्रदायिक एकता की भावना व्यंजित हुई है–**'अरे, चमके मंदिरवा में चाँद/मसजिदवा में बंसी बजे!/मिली रहू हिन्दू-मुसलमान/मान-अपमान तजो !'**[6]

इसी भाँति रेणु के 'परती परिकथा' उपन्यास में भी अनेक पर्व-त्योहारों के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों के समावेश हुए हैं। यहाँ 'सामा-चकेवा' के गीत की कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जा रही हैं–**'गँहरी-ई-ई नदिया-या-या अगम बहे धारा-आ-कि राम रे,/हंसा मोरा डूबियों नि जाये/रोई-रोई मरली-ई-ई चकेवा-आ राम रे,/आ रे हंसा लौटी के आव।'**[7]

इस उपन्यास में पनकौआ का गीत भी देखने योग्य है। यहाँ उस गीत की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–**'हाँ रे पन-कउवा..../सावन-भादव केर उमड़ल नदिया/भाँसि गेल भैया केर बेड़वा रे, पन-कउवा!/हाँ रे पन-कउवा, मचिया बैसली मैया मने-मने गुनैछै,/भैया गइलो बहिनी बुलावेले रे पनकउवा...!'**[8]

रेणु ने अपने उपन्यासों में अनेक लोक-कथाओं का भी समावेश किया है। इन लोक-कथाओं में किसी-न-किसी रूप में सांस्कृतिक चेतना के समावेश अवश्य हुए हैं।

लेकिन रेणु को इस बात का दुःख भी है कि अनेक कारणों से हमारी संस्कृति में ह्रास होता जा रहा है और उसमें शनैः शनैः विकृति आ रही है। इस विकृति का बड़ा ही यथार्थ चित्र रेणु ने अपने उपन्यासों में

खींचा है।

'मैला आंचल' के मेरीगंज का मठ सांस्कृतिक और धार्मिक हलचलों का केन्द्र है। लक्ष्मी मठ की कोठारिन है जो महन्त सेवादास की रखैल के रूप में वहाँ रहती है। महन्त सेवादास मृत्यु शैया पर पड़े हैं, मगर वे अपने दोनों हाथों से लक्ष्मी को खींचकर अपने अंक में भरना चाहते हैं। इस मठ में खूब भजन गाये जाते हैं, भंडारा भी होता है, मगर यह भ्रष्टाचार का अड्डा है। यहाँ की संस्कृति अत्यंत ही विकृत है। सेवादास की मृत्यु के पश्चात् रामदास को महन्ती मिलती है और वह भी लक्ष्मी को अपनी रखैल बना कर रखना चाहता है। वह रमपिरिया को रखैल बना लेता है। लक्ष्मी जब बालदेव के साथ दूसरे मठ की स्थापना करती है तो उसका बालदेव के साथ सम्बन्ध हो जाता है। इसी प्रकार कालीचरण और मंगला तथा डॉ. प्रशान्त और कमला में भी यौन-संबंध हो जाता है। फूलिया और रमपिरिया तो अपने भ्रष्ट चरित्र के लिए प्रसिद्ध है ही। मेरीगंज में गरीबों के शोषण की संस्कृति भी है। जमींदार विश्वनाथ प्रसाद शोषण की संस्कृति को बढ़ावा देने वाले हैं। बालदेव को कपड़े की पर्ची बाँटने का काम मिलता है तो वह भी भ्रष्टाचार करता है। पर्ची केवल अपने लोगों के बीच बाँटता है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् समाजसेवी से लेकर नेता और अफसर तक भ्रष्ट दीखते हैं। रेणु ने 'परती परिकथा' में परानपुर की सांस्कृतिक चेतना का भी बड़ा ही यथार्थ चित्र खींचा है। 'परती परिकथा' के उपन्यासकार ने गीत कथागायक[9] के रूप में बूढ़े भैंसवार को, परानपुर अंचल की लोककथाओं, लोकगीतों और लोक-कहावतों पर शोध करने वाले लोक-साहित्य के प्रेमी के रूप में 'घाट-हाकिम'[10] सुरपति राय को, कैमरे की कीमती आँखों से-परानपुर' अंचल की छवि को उजागर करने वाले कैमरामैन भवेशनाथ[11] को प्रस्तुत कर आंचलिक उपन्यासों को सर्वथा नवीन उपहार समर्पित किया है। इसी लोक-संस्कृति से प्रभावित 'मिसेज रोजउड' सात समुद्रों को पारकर 'श्रीमती गीता मिश्र' बनती हैं, 'पूरब पगली'[12] कहलाती है। लोक-संस्कृति में घुले-मिले रूप के प्रति पाश्चात्य महिला का आकर्षण रेणु ने सम्भवतः पहली बार रेखांकित किया है।.... भैंसवार को, रे मेथिया-या-या! चरवाहे को रे घोल्टा-आ-आ. ... पुकारती....हा-हा, हा-ह, हा-ह-हा लारा, ला-रा, ला-र-ला....लामि-लामि

बेनियाँ, सिर गंगाजीके पनिया, दरभंगा वाली कनिया....[13] झूमर गाती श्रीमती गीता मिश्र की तस्वीर लोक-संस्कृति के प्रति बन्द मन के झरोखे को पूर्णत: खोलने में समर्थ है।'

रेणु के उपन्यासों के अध्ययन से यह विदित होता है कि 'रेणु की भाषा-संरचना में अलग-अलग भाषा और बोलियों के शब्द रचनात्मिका प्रभावन में समरस हो गए हैं। वे श्रव्य बिम्बों व ध्वनि चित्रों के बिम्बायन में सफल हुए हैं, उपन्यासों में पशु-पक्षियों की बोलियों की सटीक ध्वन्यात्मकता का प्रयोग प्रभविष्णुता में सहायक है। लेखक में श्रुति संवेदनों को ग्रहण करने की विलक्षण क्षमता है। चूँकि रचनाकार की आत्मीयता ग्राम्य मिट्टी से है अत: उसमें श्रुति संवेदना के साथ गन्ध चेतना की भी समरसता है। उपन्यासों में एक के बाद एक स्नैप शाट्स आकर आँचलिकता के चित्रात्मक बिम्बों को उभारते हैं। इनकी भाषा कहीं अमर्यादित नहीं हुई है। जीवन के यथार्थ अंकन के नाम पर कहीं भी नग्नता को आधार नहीं बनाया गया है। चित्र उपस्थापन में सान्द्रित भाषा की प्रयुक्ति है, जिसमें रचनाकार थोड़े से शब्दों के माध्यम से संश्लिष्ट अर्थ बोध को उद्रेकित करता है।"[14]

रेणु लिखित 'जुलुस', 'दीर्घतपा', 'कितने चौराहे', 'पल्टूबाबू रोड' आदि में भी विकृत हो रही संस्कृति का चित्रण यथार्थ के धरातल पर हुआ है।

इतना तो मानना ही होगा कि 'रेणु की समूची रचनाधर्मिता स्थानीय रंग से रंजित है। इन्होंने भाषिक व्यंजना की श्रीवृद्धि हेतु मुहावरे, कहावतें, लोकोक्तियों, सूक्तियों और प्रहेलिकाओं का प्रयोग किया है। गीतिमयता रेणु की लोकभाषा के एथनिक अर्थ बोध को संवेदित करते हैं। सारांशत: कथाशिल्पी फणीश्वरनाथ रेणु ने औपन्यासिक संरचना में नव्य ध्वनियाँ, प्रतीक, बिम्ब, मिथक, उपमा, संगीत, चित्र श्रुतिसंवेदना, लय मिथक का प्रयोग कर भाषा को सृजनात्मकता व प्रभविष्णुता प्रदान की है।"[15]

जो भी हो, इतना तो मानना ही होगा कि रेणु संस्कृति के स्वच्छ और आदर्श रूप को पसंद करते थे। संस्कृति में विकृति को वे बिल्कुल पसन्द नहीं करते थे।

इस प्रकार फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में लोक संस्कृति के अनेक चित्ताकर्षक रूप रंग और गंध मौजूद हैं।

सन्दर्भानुक्रम :

1. डॉ. आनन्दमोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्त्विक अध्ययन, सं. 2005, अमर प्रकाशन, मथुरा, पृ. 229.
2. सं. डॉ. अशोक कुमार आलोक, फणीश्वरनाथ रेणु सृजन और संदर्भ, पृ. 313.
3. डॉ. आनन्दमोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्त्विक अध्ययन, सं. 2005, अमर प्रकाशन, मथुरा, पृ. 232.
4. सं. डॉ. अशोक कुमार आलोक, फणीश्वरनाथ रेणु सृजन और संदर्भ, पृ. 313.
5. फणीश्वरनाथ रेणु, मैला आँचल, सं. 1984, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 228.
6. वही, पृ. 232.
7. डॉ. आनन्द शंकर शर्मा, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों में गीति-योजना, सं. 2008, अनामिका प्रकाशन, पटना, पृ. 24.
8. वही, पृ. 25.
9. फणीश्वरनाथ रेणु, परती : परिकथा, पृ. 12.
10. वही, पृ. 44.
11. वही, पृ. 17-97.
12. वही, पृ. 204.
13. फणीश्वरनाथ रेणु, परती परिकथा, क्रमश: 215, 216.
14. डॉ. अनन्दमोहन उपाध्याय, फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों का लोकतात्त्विक अध्ययन, सं. 2005, अमर प्रकाशन, मथुरा, पृ. 232-233.
15. वही, पृ. 223.

–एसोसिएट प्रोफेसर

विश्वविद्यालय हिन्दी-विभाग

बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

■